IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

1857 की क्रांति और जन–सामान्य की भूमिका : झलकारी बाई के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. सी. पी. गुप्ता

सहायक प्राध्यापक (इतिहास)

स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

हरदा–461331, मध्य प्रदेश

शोध सारांश

विश्व के जितनी भी देशों में स्वाधीनता संग्राम लड़े गए हैं, उनमें कुछ खास नेताओं को ही इतिहास में महिमामंडित किया गया है। वास्तव में जबकि ऐसी लड़ाइयों में अपने प्राणों की बाजी लगाने वाले और कृत संकल्पित रहने वालों को न तो भारत के इतिहास में और न ही विश्व के किसी अन्य देश के इतिहास में परंपरागत इतिहास लेखन में जगह दी गई। अब मेरा प्रश्न यह है कि क्या अकेला चना भाड़ फोड़ फोड़ सकता है? बिल्कुल नहीं ! यही उक्ति झांसी के 1857 के स्वतंत्रता संग्राम पर भी लागू होती है, जहां अनगिनत जन सामान्य ने अपने जीवन को न्योछावर करके रानी की लाज, सत्ता, शोहरत और जान बचाने में अपनी जान गवां दी, ऐसी ही वीरांगना थी, रानी की हमशक्ल झलकारी बाई।

अब समय की मांग है कि हम ऐसे सामान्य नागरिकों को भी, जिन्होंने आजादी की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहूति दी है। उन्हें ससम्मान इतिहास के पन्नों पर दर्ज करें इसी कड़ी में झांसी की वीरांगना और महारानी लक्ष्मीबाई की हमशक्ल झलकारी बाई का नाम आता है । जिन्होंने बिना किसी स्वार्थ और प्राणों की चिंता किए बिना अपने प्राण पखेरू उड़ने तक केवल और केवल महारानी के लिए जिंदा रही किंतु इतिहास के पन्नों पर महारानी लक्ष्मी बाई ध्रुव तारे के समान देदीप्यमान हो रही हैं, लेकिन बिना धन शोहरत और सत्ता के लोभ से परे लड़ने वाली झलकारी इतिहास के पन्नों से गायब है, उन्हें आज स्थापित करना जरूरी है।

मुफ्त में आजादियाँ, मिलती नहीं है दोस्तों।

मुल्क जो आजाद होते हैं, लहू के मोल होते हैं।।

किसी देश की आजादी की नींव में अनगिनत माताओं की बिछुड़ी गोदें, बहिनों की बिछुड़ी राखी और सुहागिनों के बिछुड़े सुहाग आततायी सरकार की निरंकुशता के फांसी के फंदे पर झूले और उनकी गोलियों के शिकार, शहीद छिपे होते हैं। देश ऋणी है उन शहीदों का जिन्होंने देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए अपना बचपन और यौवन न्योछावर कर दिया। आजादी में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग करने वाले कुछ लोग त्याग, बलिदान और आजादी के लिए किए गए लंबे संघर्षों के बाद भी स्वतंत्र भारत में वह सम्मान और शोहरत न प सके, जिसके वे वास्तव में हकदार थे। ऐसे तमाम वीरों में महिलाएं भी शामिल थीं, जो हँसते–हँसते देश, शासक और समाज के लिए कुर्बान हो गयीं। **ऐसी ही थी बुंदेलखंड की झलकारी बाई जो, इतिहास की पुस्तक बन सकती थी किन्तु कुछ पृष्ठों में ही सिमट कर रह गयी। दुर्भाग्य से देश के सभी बड़े इतिहासकारों ने दलित वीरांगना झलकारी बाई की उपेक्षा की है, किंतु राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा वीरांगना झलकारी बाई के व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व के संबंध में उद्‌गार व्यक्त करती हुई निम्न पंक्तियां श्रद्धांजलि स्वरूप लिखी गयीं थीं, जो आज भी बुन्देली जुबान में विद्यमान हैं–**

आकर रण में ललकारी थी, वह तो झांसी की झलकारी थी।

गोरों को लड़ना सिखा गई, रानी बन जौहर दिखा गई

है इतिहास में झलक रही, वह भारत की ही नारी थी।

भारत में ब्रिटिश कंपनी राज्य का बीजारोपण 1757 ई. की प्लासी युद्ध के उपरांत हुआ और फिर बक्सर के युद्ध ने उसे मजबूती दी। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में प्रथम चरण में 1608 ई. से लेकर 1756 ई. तक व्यापार और वाणिज्य का विस्तार किया, द्वितीय चरण में 1757 ई. से 1857 ई. तक औपनिवेशिक साम्राज्य विस्तार और इसके बाद अंतिम चरण में साम्राज्य की प्रशासनिक सुदृढ़ता का कार्य किया है। अर्थात कंपनी के दो ही प्रमुख उद्देश्य थे। पहला व्यापारिक शोषण और दूसरा साम्राज्य विस्तार। अंग्रेजों के इन्हीं दोनों उद्देश्यों से भारत के हिन्दू और मुसलामानों के चार तत्वों– धर्म, मान, जीवन और सम्पत्ति को भयाक्रांत किया जा रहा था।[1]

द्वितीय चरण में 1757 ई. से 1857 ई. तक औपनिवेशिक साम्राज्य विस्तार के लिए लार्ड वेलेजली ने सहायक संधि और लार्ड डलहौजी ने व्यपगत के सिद्धांत (Doctrine of lapse) रूपी औजार का सहारा लिया। जिसका उद्देश्य भारतीय रियासतों का धीरे–धीरे ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाया जाना था । डलहौजी की विलय की नीति का सभी भारतीय राजाओं ने विरोध भी किया और व्याकुलता भी प्रकट की। व्यपगत के सिद्धांत के अनुसार **"उत्तराधिकार का अधिकार उनको नहीं रहा जिनकी धमनियों में वंश के प्रवर्तक का रक्त नहीं बह रहा होता था।"** डलहौजी ने इसी सिद्धांत के द्वारा सतारा, जैतपुर, संभलपुर, बघाट, उदयपुर, झांसी और नागपुर को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाया था।[2]

अंग्रेजों के द्वारा किए गए राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक, और सामाजिक कार्यों को, भारतीय अपनी पुरातन व्यवस्थाओं के ढहने के खतरे के रूप में देख रहे थे। साथ ही उन्हें उक्त कार्यों में सर्वत्र शोषण की ही बू आ रही थी। अतः भारतीय समाज को शंकालू बना दिया था और भारतीयों के द्वारा विद्रोह करना स्वाभाविक था। इसी अविश्वास, शोषण और शंका के बीच ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा 1856 में सेना के लिए एनफील्ड राइफल का उपयोग प्रारंभ किया गया। कारतूसों को बंदूक में लगाने से पहले, उसके पीछे के कवर को हटाना पड़ता था। उस समय यह अफवाह फैली कि कारतूसों का कवर गाय या सूअर की चर्बी से बना हुआ है।

यह सिद्ध हो चुका है कि चाहे भूल से ही हो, परंतु इन कारतूसों में गाय और सुअर की चर्बी का प्रयोग किया गया था। एक सैनिक अधिकारी ने विद्रोह के पश्चात अपनी पुस्तक **'बंगाल के सैनिकों का विद्रोह'** में लिखा–**"एनफील्ड राइफल में एक विशेष प्रकार के कारतूस का प्रयोग किया जाता था, जिसमें सूअर और गाय या भैंस की चर्बी का प्रयोग किया गया था।"** उसी प्रकार **फील्ड मार्शल लॉर्ड राबर्ट्स** ने भी लिखा **"भारत सरकार के कागजों को देखते हुए मि. फॉरेस्ट ने यह खोज की है कि कारतूसों के बनाने में जिस चिकने पदार्थ का प्रयोग किया गया था, उसमें निःसंदेह सूअर और गाय की घृणित चर्बी का प्रयोग किया गया था और इन कारतूसों के तैयार करने में सैनिकों की धार्मिक भावना का बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखा गया था।"**[3]

लॉर्ड डलहौजी ने रानी लक्ष्मीबाई के दत्तक पुत्र को उनके पति का उत्तराधिकारी मानने से इनकार कर दिया था और विलय की नीति (Doctrine of lapse) के तहत उनके राज्य को छीन लिया था। इस फैसले को बदलवाने के लिए रानी ने हर बड़े अफसर का दरवाजा खटखटाया, बार–बार अपीलें कीं पर उनकी बात नहीं सुनी गई। रानी लक्ष्मीबाई ने सिपाहियों का नेतृत्व स्वीकार किया, मार्च 1858 में उनके मैदान संभालने के बाद झांसी ने अंग्रेजों को बहुत कड़ी टक्कर दी। उस पर काबू पाना अंग्रेजों के लिए वाकई बहुत दुरूह साबित हुआ।[4]

'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी' की पंक्तियां सुभद्रा कुमारी चौहान द्वारा शायद केवल लक्ष्मीबाई के लिए ही समर्पित नहीं है बल्कि सम्पूर्ण दुर्गा दल की वीरता को ध्यान में रखकर लिखी गयी होंगी। लक्ष्मीबाई ने भारतीय इतिहास की महिलाओं के संघर्ष की परंपरा को जीवित रखा। तभी तो इतिहास में रानी लक्ष्मीबाई की तुलना फ्रांस की रानी जॉन ऑफ आर्क से की जाती है।

1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का जब हम मूल्यांकन करते हैं, तो मालूम पड़ता है कि इसमें यहां का जनसामान्य, महिलाएं, सैनिक, हिंदू, मुसलमान और अन्य निम्न श्रेणी के लोग भी आंदोलन को अपना पूरा सहयोग और समर्थन दे रहे थे। **अतः 1857 का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम बुंदेलखंड के परिप्रेक्ष्य में पूर्णतः जन विद्रोह था।**

झाँसी के बंगाल रेजीमेंट के एक सैनिक का रिश्तेदार दिल्ली की बंगाल रेजीमेंट की ओर से एक पत्र लेकर आया जिस पर लिखा हुआ था कि–**''हर तरफ की बंगाल रेजीमेंट के सिपाहियों ने अंग्रेजों के खिलाफ जेहाद छेड़ दी है, और चूँकि झाँसी की बंगाल रेजीमेंट इस मामले में चु। बैठी हुई है, कोई भी कदम नहीं उठाया है, इसलिए हम उन्हें धर्म भ्रष्ट मानते हैं, जाति से वहिष्कृत करते हैं।''**[5]

यह ताना काम कर गया और देखते ही देखते **झाँसी की बंगाल रेजीमेंट के सिपाही देवीसिंह, नौरंगसिंह, जयसिंह,जयदिन सिंह** आदि के नेतृत्व में विद्रोह की ज्वाला में कूद पड़े और 5 जून, 1857 ई. को झाँसी के बाहर अंग्रेजों के फौजी अड्डा स्टारफोर्ड पर हमला कर दिया।[6]

7 जून, 1857 ई. को **स्कॉर्ट और पर्सेल ब्रदर्स** को पकड़कर मौत के घाट उतार दिया और झाँसी के मुख्य न्यायाधीश **एंड्रयूज** को भी रानी महल के सामने कत्ल कर दिया।[7] अंग्रेज सेनापति गार्डन भी मारा गया तथा किले में रिसालदार काले खाँ और तहसीलदार मोहम्मद अली हुसैन के सम्मुख अंग्रेजों व उनके समर्थकों ने घबड़ाकर आत्मसमर्पण कर दिया। वास्तव में यह विद्रोहियों की प्रथम ऐतिहासिक जीत थी।[8] 8जून, 1857 ई. को झाँसी के दरोगा बख्शीश अली के आदेश से अंग्रेज औरतों–बच्चों, सिपाहियों को कैप्टन स्कीन सहित मौत के घाट उतार दिया गया।[9]

झांसी के विद्रोह को कुचलने के लिए ह्यूरोज 21 मार्च, 1858 ई. को झाँसी पहुंचा और सुबह से ही शहर के पश्चिम में डेढ़ कोस दूर अपना डेरा डाल दिया और घोषणा करा दी कि अंग्रेज बहादुर का आदेश है कि 5 वर्ष से 80 वर्ष तक के पुरुषों को मार दिया जाए।[10]

साथ ही उसने रानी को एक पत्र भेजा कि आत्मसमर्पण करने पर, झांसी को माफ कर दिया जाएगा तब रानी लक्ष्मीबाई ने एक सभा बुलाई उस सभा में सभी जातियों और वर्गों के अलग–अलग मुखिया और सरदार लोग इकट्ठे हुए और सभी ने रानी से कहा कि हम युद्ध में मर जाएंगे, लेकिन अपने झांसी की एक इंच भी जमीन अंग्रेजों को नहीं देंगे।[11]

रानी लक्ष्मीबाई भी ह्यूरोज की गतिविधियों से पूरी तरह परिचित थी और अंदर ही अंदर सैनिक तैयारियाँ कर रही थी। उस समय उनके पास दस हजार बुंदेले और अफगानों की स्थाई सेना थी जिसमें 400 घुड़सवार और 1500 पैदल सैनिक थे।[12] लक्ष्मीबाई ने बुंदेलखंड के सभी राष्ट्रभक्त राजाओं के सहयोग से अपनी पूरी शक्ति लगाकर बुंदेलखंड से अंग्रेजी सत्ता को मिटाने का प्रयास किया।[13]

3 अप्रैल 1858 ई. को निर्णायक युद्ध हुआ, किंतु धोखेबाज और अंग्रेजों के पिट्ठू ठाकुर **दूल्हा जू** ने ओरछा फाटक से कंपनी सेना को प्रवेश करा दिया और रानी की समस्त रणनीति को बेकार साबित करने का अधर्म किया।

रानी ने तथाकथित अबला को सबला बनाने के उद्देश्य से दुर्गादल के रूप में उसे संगठित करके रणचंडी बना दिया। रानी ने अपनी महिला बिग्रेड में अनेक स्त्रियों को कर्नल का ओहदा देकर उन्हें अंग्रेजों से लड़ने के तैयार किया।[14] **झलकारी बाई, गुलाम गौस खाँ, पूरन कोरी, कुँवर खुदावख्श कर्नल कुमारी जूही, कर्नल कुमारी काशीबाई, कर्नल कुमारी मोतीबाई, कर्नल श्रीमती बरिशन,कर्नल सुंदर बाई, कर्नल मुंदर बाई** आदि किले की लड़ाई में बलिवदी पर न्योछावर हो गईं।[15]

स्वतंत्रता का यह युद्ध महारानी के कुशल नेतृत्व तथा मार्ग निर्देशन में दिनांक 2 अप्रैल 1859 तक ऐसा प्रलयंकारी सिद्ध हुआ की सर ह्युरोज को **'झांसी गले की फांसी'** जैसी लगने लगी थी ।[16]

झांसी के किले को बार–बार अंग्रेजों की तोपों से क्षति होती थी किंतु वहां पर लगे हुए कामगार राष्ट्र भक्त उसकी इतनी जल्दी मरम्मत कर देते थे कि यकीन करने लायक नहीं है। तभी **ह्यूरोज** अपनी दूरबीन से देख कर कहता है **"ओह! स्त्रियां तोप चला रही हैं ! हैं मर्दानी वर्दी में, मगर पहचानी जा सकती हैं। कुछ रसद बांट रही हैं। कुछ टूटी हुई दीवारों और बुर्जों के कंगूरों की मरम्मत में मदद दे रही हैं !! इतनी तरतीव से, इतनी तेजी से, हिंदुस्तानियों को काम करते आज देखा है !!! अचरज होता है।"[17] स्टुअर्ट भी दूरबीन लेकर देखता है और कहता है "जनरल, ...ये सब नेपोलियन हो गए हैं क्या ?"[18]**

अंग्रेजों के हाथों अपनी पराजय को सुनिश्चित समझकर रानी ने अंतिम प्रयास करने का जो फैसला लिया वह वास्तव में रानी की सहेली तथा दुर्गा दल की कमांडर झलकारी बाई के साहस और बलिदान से ही सार्थक सिद्ध हुआ।[19]

1857 की जन क्रांति में झांसी की एक दलित और सामान्य परिवार की **झलकारी भी ललकारी थी।** यद्यपि अधिकांश इतिहासकारों ने झलकारी के कार्य के मूल्यांकन को अपनी लेखनी से ओझल किया है, किंतु अब समय के साथ दलित साहित्य के विमर्श की कड़ी में इस वीरांगना के विराट व्यक्तव पर मंथन करना जरूरी है। वास्तव में झलकारी

बाई के साहस और संघर्ष की चर्चा किए बिना सन् 1857 ई. की क्रांति और जन सामान्य का योगदान अधूरा ही माना जाएगा।

झलकारी बाई का जन्म झाँसी के निकट 1830–35 ई. में **मुलचंद उर्फ सत्तू कोरी और धनिया** के घर **भोजला गाँव** में हुआ था। झलकारी के पिता एक बहादुर सैनिक तथा ख्याति प्राप्त तीरंदाज थे। झलकारी अपने माँ–बाप की इकलौती संतान थी। बचपन में ही उनकी मां की मृत्यु हो गई। पिता ने मां और पिता दोनों की भूमिका निभाते हुए उन्हें बड़े प्यार से पाला और घुड़सवारी व तीरंदाजी की शिक्षा दी। झलकारी को सैन्य शिक्षा एक प्रकार से अपने बाल्यकाल से ही प्राप्त हो गयी थी। वह प्रारंभ से ही तीर, तलवार, भाला, बरछी की विधा में रुचि लेती थी, उसे स्त्रियोचित क्रियाएँ कभी भी आकर्षित नहीं कर सकीं, वह बचपन में ही खेल–कूद के दौरान किले बनाकर रहती थी तथा साथी बच्चों की परवाह किए बिना किलों में रहने की प्रबल इच्छा प्रकट करती थी।

बचपन से ही झलकारी घर के काम के अलावा पशुओं की देखरेख और जंगल से लकड़ी इकट्ठा करने का काम भी करती थी। एक जनश्रुति के अनुसार एक बार जंगल में झलकारी बाई की मुठभेड़ एक बाघ से हो गई, किंतु वह घबड़ाने की बजाय उस बाघ से मुकाबला करने का किया था और उन्होंने अपनी कुल्हाड़ी से उस जानवर को मार डाला था।

झलकारी का विवाह झांसी की सेना में सिपाही रहे पूरन कोरी नामक युवक के साथ हुआ। पूरे गांव वालों ने झलकारी बाई के विवाह में भरपूर सहयोग दिया। विवाह पश्चात वह पूरन के साथ झांसी आ गई। शायद विधाता ने उसे रानी के सहयोग के लिए ही इस दुनिया में भेजा था तभी तो वह हू–ब–हू लक्ष्मीबाई की हमशक्ल थीं।

इस दलित वीरांगना ने वह करिश्मा कर दिखाया जो इतिहास में अन्य कोई सामान्य नागरिक नहीं कर सका था। अपने पिता की उम्मीदों पर झलकारी सौ फीसदी खरी उतरी, जब उसकी मुलाकात किले के अंदर शिव मंदिर में शिवरात्रि के दिन लक्ष्मीबाई से हुई, तो रानी ने झलकारी को झाँसी की सुरक्षा के लिए स्त्री सैनिक दस्ते गठित करने के लिए आमंत्रित किया। कोरी परिवार में जन्मी इस दलित बेटी के लिए जहाँ यह एक राष्ट्र भक्ति प्रदर्शित करने का सुअवसर था वहीं रानी का अहोभाग्य था कि झलकारी जैसी तेज तर्रार, दूरदर्शी और समर्पित महिला प्राप्त हुई। झलकारी पहली ही मुलाकात में विश्वासघाती पीर अली को समझ गयी थी, जब वह झांसी के दरबार में आया था और उसने कहा। "क्यों हाय तौबा मचा रहे हो ? अंग्रेजी हुकूमत में अंधेर नहीं होगा। सबको रोजगार मिलेगा। मनमानी नहीं चलेगी। एक सा बर्ताव सब लोग पाएंगे। सब अपना–अपना धर्म, कर्म का पाल सकेंगे। भरोसा न हो तो नवाब अली बहादुर से पूछ लो। सब बड़े आदमी यही कहेंगे।" तभी **झलकारी आती है और कहती है** "जो आओ बड़ौ वकील अंग्रेजन को। कायखो लगाई रे जे बड़ी–बड़ी मूछें ? शर्म नईं आउत ऐसी ओछी बात कतन !"[20]

सर ह्यूरोज ने लिखा है कि किले पर युद्ध की तैयारी का काम– मोर्चा बांधने और दारू–गोला धोने का काम स्त्रियां करती थीं।[21] रानी को अपने सैनिकों में से सबसे ज्यादा भरोसा महिला ब्रिगेड **दुर्गा दल** पर था, जिसकी कमांडर झलकारी को बनाया गया था। जिसने अंग्रेजों से लोहा लेकर उन्हें छठी का दूध याद कराया।

झलकारी ने स्वयं इच्छा जाहिर की थी कि वह उन्नाव दरवाजे पर युद्ध करेगी उन्हीं के शब्दों में सरकार (लक्ष्मीबाई), मैं तो अपने उन्नाव दरवाजे पै काम कर हों। किले में काम कर हों तो उन्नाव दरवाजौ सुनों न हो जैय ?[22]

पीर अली एवं दूल्हा जू के विश्वासघात के कारण अंग्रेजी सेना किले में प्रवेश कर गई, तब अन्य बहादुर सैनिकों के साथ झलकारी का पति और **तोपची पूरन** वीर गति को प्राप्त हुआ, तब झलकारी पति वियोग में दुःखी होकर विधवा विलाप करने के स्थान पर रणचंडी की भांति कोहराम मचाने लगी और साथ ही रानी लक्ष्मीबाई की वेशभूषा धारण कर रानी को किले के बाहर विदाकर स्वयं युद्ध का मोर्चा संभाला।[23]

झलकारी ने ह्यूरोज तथा उसकी सेना को तब तक उलझाए रखा जब तक कि रानी उनकी पहुँच से दूर नहीं चली गई। ह्यूरोज को जब इस झाँसे का पता चला तो वह दाँत पीसते हुए बोला–**''तुम रानी नहीं, झलकारी हो, तुम को गोली मार दी जाएगी।''**[24]

झलकारी ने उत्तर दिया–**''मारे दे। मैं क्या मरबे को डरती हूँ, जैसे इत्ते सिपाही मरे तैसे एक मैं सही।''** ह्यूरोज तथा स्टूअर्ट दोनों ही अंग्रेज जनरलों ने झलकारी को पागल घोषित करके जेल भेज दिया, झलकारी गाते हुए चली गयी–**''जननी जनम दियो तो तोको बस आजहि के लाने।''**[25] झलकारी की राष्ट्रभक्ति को देखकर जनरल ह्यूरोज ने सेनापति स्टूअर्ट से कहा था –**''यदि भारतीय स्त्रियों में से एक प्रतिशत भी इस लड़की के समान पागल हो जाएं, तो जो कुछ हमारे पास है, उस सबको छोड़कर हमें इस देश से चले जाना पड़ेगा।** यह वही स्टूअर्ट था जिसने महारानी लक्ष्मीबाई की दुर्गादल को गोलंदाजी करते हुए अपनी दूरबीन से देखा था और आश्चर्य व्यक्त करते हुए अनायास चिल्ला उठा था–**''बलवाइयों की यह रानी औरत है या जादू। इसने तो गर्ल्स को गनर्स बना दिया। अब क्या बंदरों को बंदूकची बनाएगी।''**[26]

यद्यपि उनकी मौत को लेकर इतिहासकारों में मत भिन्नता है। जहाँ कुछ इतिहासकारों ने लिखा है कि ब्रिटिश सेना द्वारा झलकारी बाई को फांसी दे दी गई थी, वहीं कुछ ने लिखा है कि वह युद्ध में ही वीरगति को प्राप्त हुई थीं और कुछ जगहों पर अंग्रेजों द्वारा झलकारी को तोप से उड़ा देने का जिक्र किया गया है। कुछ भी हो इस दलित बीरांगना ने देश की प्रथम आजादी की यज्ञ वेदी में हँसते–हँसते प्राणों की आहुति देकर सदैव के लिए अमर हो गयी।

आज भी झाँसी के आसपास झलकारी लोगों की जुबान में राज करती है, वहाँ एक लोकगीत प्रचलित है –

मचा झाँसी में घमासान चहुँ ओर मची किलकारी थी।

अंग्रेजों से लोहा लेने, रण में कूदी झलकारी थी।।[27]

संदर्भ ग्रंथ :

[1] ग्रोवर बी.एल. और यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि., रामनगर, नई दिल्ली, संस्करण 1994, पृष्ठ संख्या 251

[2] ग्रोवर बी.एल. और यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि., रामनगर, नई दिल्ली, संस्करण 1994, पृष्ठ संख्या 260

[3] शर्मा एल.पी. आधुनिक भारत का इतिहास, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा, संस्करण 1971, पृष्ठ संख्या 297–98

[4] प्रोफेसर विपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रथम संस्करण, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण 1990 पृष्ठ सं. 03

[5] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.43–64
[6] सिन्हा एस. एन., दि रिवोल्ट ऑफ1857 इन बुंदेलखंड– पृ.सं. 72
[7] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.66
[8] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.67
[9] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.68
[10] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.103–104
[11] वर्मा वृंदावनलाल झांसी की रानी मयूर प्रकाशन मयूर प्रकाशन झांसीए पृ. सं. 81
[12] रनाडे, प्रतिभा (अनुवाद–गोविंद गुंठे), झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.109
[13] जैन, दशरथ (प्रधान संपादक), राष्ट्रगौरवः बुंदेलखंड का स्वतंत्रता संग्राम, 1995–96, पृ.सं.128
[14] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी 1999 पृ.सं.77
[15] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी 1999 पृ.सं.77
[16] शर्मा यज्ञ दत्त, बुंदेलखंड समग्र 1998 पृष्ठ 50
[17] वर्मा वृंदावनलाल झांसी की रानी मयूर प्रकाशन मयूर प्रकाशन झांसी पृष्ठ सं. 91
[18] वर्मा वृंदावनलाल झांसी की रानी मयूर प्रकाशन मयूर प्रकाशन झांसी पृष्ठ सं. 91
[19] झाँसी की रानी–लक्ष्मीबाई, पृ.सं.118
[20] वर्मा वृंदावनलाल झांसी की रानी मयूर प्रकाशन मयूर प्रकाशन झांसी।ज पृ.सं. 48–49
[21] पारसनवीस, श्री अच्युत दत्तात्रय बलवंत 'झांसी की रानी लक्ष्मी बाई' (मराठी पुस्तक का अनुवाद) द्वितीय संस्करण, विक्रम संवत 1982, प्रकाशक, गांधी–हिंदी–पुस्तक–भंडार, साहित्य भवन जांस्टनगंज, प्रयागए पृ.सं. 118
[22] वर्मा वृंदावनलाल झांसी की रानी मयूर प्रकाशन मयूर प्रकाशन झांसी।ज पृ.सं. 89
[23] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी1999 पृ.सं.77
[24] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी1999 पृ.सं.77
[25] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी1999 पृ.सं.77
[26] सक्सेना, सुधीर, मध्य प्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी1999 पृ.सं.77
[27] बाजपेयी, डॉ. संतोष कुमार एवं दुबे, डॉ. नागेश, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सागर संभाग का योगदान, 2010, पृ.सं.221